जय सुभाष

प्रथम सर्ग

सुभाषचन्द्र बोस का जन्म 23 जनवरी, 1897 ई० को कटक में हुआ था। उनके जन्म से कटक में एक नवीन प्रभात का उदय हुआ। सुभाषचन्द्र बोस के पिता का नाम जानकीदास तथा माता का नाम प्रभावती था। जानकीदास समाज के एक प्रतिष्ठित नागरिक थे तथा माँ साध्वी प्रवृत्ति की थीं। बाल्यकाल में सुभाषचन्द्र बोस के जीवन पर अपने माता-पिता का गहरा प्रभाव पड़ा। उनकी माता प्रारम्भ से ही उन्हें वीरता से ओत-प्रोत कहानियाँ सुनातीं तथा भारत की प्राचीन संस्कृति के विषय में भी बताया करती थीं। इस प्रकार सुभाषचन्द्र बोस के हृदय में प्रारम्भ से ही स्वदेश-प्रेम की भावना जाग्रत हो गई। सुभाषचन्द्र बोस बाल्यकाल से बुद्धिमान् तथा साहसी थे। अनेक गुणों से सम्पन्न अपने गुरु बेनीमाधव के सम्पर्क में आने पर उन्होंने समाज-सेवा के व्रत को अपनाया। सुभाषचन्द्र बोस पढ़ाई में भी मेधावी छात्र के रूप में जाने जाते थे। उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की और कलकत्ता के 'प्रेसीडेंसी कॉलेज' में प्रवेश लिया। कलकत्ता में ही उनका परिचय सुरेश बनर्जी से हुआ। उनके आश्रम में जाकर सुभाष ने मातृभूमि की सेवा में अपना योगदान देने के लिए आजीवन अविवाहित रहने का व्रत लिया। इसी आश्रम में एक दिन स्वामी विवेकानन्द ने सत्य को खोजने का सुन्दर उपदेश दिया। सुभाषचन्द्र बोस के हृदय पर इस उपदेश का गहरा प्रभाव पड़ा। वे पढ़ाई त्यागकर सत्य की खोज में निकल पड़े। वे अनेक तीर्थ स्थानों पर गए, लेकिन अन्ततः उन्हें निराशा का ही मुख देखना पड़ा। वे वापस घर लौट आए तथा पुनः अध्ययन प्रारम्भ किया। उन्होंने इण्टरमीडिएट की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। प्रेसीडेंसी कॉलेज में ओटन महोदय द्वारा भारतीयों के प्रति अपमानजनक शब्द कहे जाने पर उन्होंने उनके गाल पर तमाचा मार दिया। इस घटना के कारण उन्हें कॉलेज से निकाल दिया गया। दूसरे विद्यालय में प्रवेश लेकर उन्होंने बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की। अपने पिता की इच्छानुसार विदेश जाकर सुभाष ने 'कैम्ब्रिज विद्यालय' से आई०सी०एस० की परीक्षा भी उत्तीर्ण की, परन्तु स्वदेश-प्रेम की भावना से ओत-प्रोत होने के कारण उन्होंने इस पद को त्याग दिया और मातृभूमि की रक्षा के लिए भारत लौट आए। वस्तुतः इनके जीवन का ध्येय अत्यन्त महान् था; अतः वे स्वतन्त्रता के कठिन मार्ग पर अपने कदम बढ़ाते रहे।

द्वितीय सर्ग

यह वह समय था, जब अंग्रेजों के अत्याचारों से भारतवासी अत्यधिक आतंकित थे। तभी सुभाषचन्द्र बोस ने परतन्त्र भारत को स्वतन्त्र कराने का स्वप्न देखा। इसी समय गांधीजी ने सन् 1921 ई० में असहयोग आन्दोलन का सूत्रपात किया। इस आन्दोलन में निर्धन, धनी, श्रमिकों, किसानों तथा सभी जातियों ने अपना अपूर्व सहयोग दिया। वकीलों द्वारा न्यायालयों का बहिष्कार किया गया, सरकारी उपाधियों को लौटा दिया गया, विदेशी वस्तुओं की घर-घर में होली जलाई गई। इसी समय देशबन्धु चितरंजनदास ने 'नेशनल कॉलेज' की स्थापना की। सुभाषचन्द्र बोस को ही इस कॉलेज का प्राचार्य नियुक्त किया गया। सुभाषचन्द्र बोस ने छात्रों के हृदय में देशभक्ति की ज्वाला को प्रज्वलित किया। कांग्रेस के कार्यक्रमों में भी वे भाग लेते रहे। पं० मोतीलाल नेहरू द्वारा बनाई गई 'स्वराज्य पार्टी' में देशबन्धु चितरंजनदास के साथ सुभाष ने भी प्रवेश किया। 'स्वराज्य दल' द्वारा कौन्सिल में प्रवेश करने का निर्णय लिए जाने पर सुभाष ने दल के प्रतिनिधियों को जिताया तथा 'कलकत्ता महापालिका' में बहुमत प्राप्त किया। इस महापालिका में देशबन्धु को नगर प्रमुख तथा सुभाष को अधिशासी अधिकारी का पद दिया गया। सुभाषचन्द्र बोस ने नियत वेतन का आधा भाग ही लिया तथा आधे वेतन से दीन-दु:खियों के कष्टों को दूर करना प्रारम्भ किया; लेकिन अकारण ही उन्हें अंग्रेज सरकार ने क्रमश: अलीपुर, बरहमपुर तथा माण्डले जेल में बन्दी बनाकर रखा। माण्डले जेल में उनके स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ा। उनकी रिहाई के लिए जगह-जगह नारे लगाए गए तथा सभाएँ की गईं। इस प्रकार के जन-आग्रह के समक्ष सरकार को झुकना पड़ा तथा उसने सुभाष

को मुक्त कर दिया। इस प्रकार सुभाषचन्द्र बोस ने स्वदेश की रक्षा करते हुए अनेक कष्टों को हँसते-हँसते सहन किया। इसी सर्ग से एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

कभी संकटों की सुभाष ने,
कुछ परवाह नहीं की।
सही यातना, पर परिवर्तित,
अपनी राह नहीं की॥

तृतीय सर्ग

सन् 1928 ई० में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। भारत के नर-नारी इस अवसर पर हर्ष विभोर थे। भारत के कोने-कोने से नेतागण आए हुए थे। इस अधिवेशन में पण्डित मोतीलाल नेहरू को अध्यक्ष बनाया गया। सुभाषचन्द्र बोस स्वयंसेवकों के दल के सेनानी बने हुए थे। अधिवेशन के आयोजन का श्रेय सुभाषचन्द्र बोस को ही प्राप्त हुआ। सभी व्यक्ति उनकी जय-जयकार कर रहे थे। सभा में राष्ट्रगान के साथ राष्ट्रीय ध्वज फहराया गया। सारा वातावरण 'भारतमाता की जय' से गूँज उठा। पण्डित मोतीलाल ने भी सुभाष की प्रशंसा करते हुए उन्हें पुत्रवत् बताया। सुभाषचन्द्र बोस को कलकत्ता का मेयर चुना गया। उनके व्यक्तित्व की विशेषताओं को दर्शाती हुई निम्नलिखित पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—

वह निर्वाह स्वकर्त्तव्यों का
भली-भाँति करते थे।
यथाशक्ति नागरिकों का भी
कष्ट सभी हरते थे॥

इसी समय स्वतन्त्रता सेनानियों के एक जुलूस पर पुलिस द्वारा लाठियाँ चलाई गईं, जिसमें सुभाष के शरीर पर भी चोटें आईं। तत्पश्चात् उन्हें नौ मास के लिए अलीपुर जेल में भेज दिया गया। जेल से छूटने पर उन्होंने फिर युवकों को उत्साहित किया, जिससे शासन ने भयभीत होकर उन्हें पुनः जेल भेज दिया। जेल में ही उन्हें अपने रुग्ण पिता की मृत्यु का समाचार मिला और तभी वे कटक के लिए रवाना हो गए। उन्होंने 'इण्डियन स्ट्रगल' नामक पुस्तक भी लिखी। सन् 1936 ई० में उन्हें पुनः गिरफ्तार कर लिया गया। लखनऊ में हुए कांग्रेस अधिवेशन में उन्हें अध्यक्ष बनाने की माँग की गई, परन्तु पूर्ण रूप से स्वस्थ न होने के कारण उन्होंने इस पद को स्वीकार नहीं किया। पूर्ण स्वस्थ हो जाने के बाद इन्हें हरिपुरा कांग्रेस अधिवेशन का अध्यक्ष चुना गया।

चतुर्थ सर्ग

ताप्ती नदी के तट पर स्थित विट्ठलनगर में कांग्रेस का 51वाँ अधिवेशन हुआ। इस अधिवेशन में इक्यावन द्वार और इक्यावन राष्ट्रध्वज फहराए गए तथा इक्यावन बैलों के रथ में बैठकर सुभाषचन्द्र बोस आए। इसके उपरान्त 'त्रिपुरा कांग्रेस अधिवेशन' में दो महान् नेताओं में अध्यक्ष पद के लिए चुनाव हुआ, जिसमें पट्टाभि सीतारमैया हार गए तथा सुभाष जीत गए। परन्तु गांधीजी सुभाष के स्थान पर पट्टाभि सीतारमैया को अध्यक्ष पद पर देखना चाहते थे; अत: गांधीजी द्वारा रोष प्रकट करने पर, दल की एकता के लिए, उन्होंने अपना पद त्याग दिया और '**फारवर्ड ब्लॉक**' नामक दल गठित किया। कलकत्ता में स्थित 'ब्लैक हॉल' नामक स्मारक को, जिसमें अनेक अंग्रेजों को जिन्दा जला दिया गया था, हटवाने के लिए नेताजी ने बहुत प्रयास किया; जिसके परिणामस्वरूप उन्हें जेल भेज दिया गया। जेल से मुक्त होने पर उन्हें अपने घर में ही नजरबन्द रखा गया। इस प्रकार सुभाषचन्द्र बोस निरन्तर मातृभूमि के लिए अंग्रेज सरकार की यातनाएँ सहते रहे।

पंचम सर्ग

नजरबन्दी के समय सुभाष के घर पर शासन का रात-दिन पहरा लगा रहता था। सुभाष देश के बारे में बहुत अधिक चिन्तित हो उठे थे; अत: वे वहाँ से भागने की योजना बनाने लगे। सुभाष अपनी दाढ़ी बढ़ाकर तथा मौलवी का वेश धारण करके 15 जनवरी, 1941 ई० को शीतकाल की अर्द्ध-रात्रि में विदेश के लिए भाग निकले। काबुल जाकर उनकी उत्तमचन्द्र से मित्रता हुई, जिसने उन्हें बाहर पहुँचाने में सहायता दी। जापान जाकर उन्होंने '**आजाद हिन्द फौज**' का प्रधान सेनानायक बनकर ओजस्वी नेतृत्व प्रदान किया, जिसमें अनेक भारतीय सैनिकों ने इस फौज को सुदृढ़ता प्रदान की। इसके उपरान्त वे सिंगापुर पहुँचे, जहाँ पर रासबिहारी बोस ने उनका स्वागत किया। सुभाष ने अपने भाषणों से वहाँ की जनता में नवचेतना जगाई। सुभाष की सेना के भीतर 'नेहरू', 'गांधी', 'आजाद' और 'बोस' नामक चार ब्रिगेड बनाए गए। इनमें सभी जातियों के सैनिक परस्पर प्रेमपूर्वक कार्य करते थे। सभी सैनिक ब्रिटिश राज्य को पराजित करने के लिए लालायित थे।

षष्ठ सर्ग

सिंगापुर में सैनिकों को सम्बोधित करते हुए सुभाष ने नारा दिया—"तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूँगा।" निम्नलिखित पंक्तियाँ इस सम्बन्ध में उनकी ओजपूर्ण वाणी को ध्वनित करती हैं—

'दो तुम रक्त, मुक्ति दूँ तुमको'
दिया एक यह नारा।
कह 'जयहिन्द', ब्रिटिश शासन को
निर्भय हो ललकारा॥

सुभाष द्वारा प्रेरित होकर उनकी सेना अंग्रेजों की सेना को पराजित करने लगी। 'भारत माता की जय' तथा 'नेताजी की जय' के साथ-साथ 'आजाद हिन्द फौज' निरन्तर आगे बढ़ती जा रही थी। 18 मार्च, 1944 ई० को यह सेना अंग्रेजों को पराजित करती हुई कोहिमा पहुँच गई। वहाँ पर सुभाष तथा गांधीजी की जय-जयकार की ध्वनि गूँज उठी। भारतीय सेना ने 'मोराई टिड्डिम' पर अधिकार जमा लिया। 'अराकान' पर भी तिरंगा झण्डा फहरा दिया गया। विजय प्राप्त करते हुए उन्होंने सन् 1945 ई० में नववर्ष को पूर्ण उत्साह तथा उमंग से मनाया।

सप्तम सर्ग

जीवन में सुख-दु:ख तथा जय-पराजय का चक्र चलता ही रहता है। 'आजाद हिन्द फौज' को भी पराजय का मुख देखना पड़ा। बर्मा पर शत्रुओं ने पुन: अपना अधिकार जमा लिया। अगस्त 1945 ई० में अमेरिका द्वारा जापान के हिरोशिमा तथा नागासाकी नगरों पर अणु बम गिराए गए। इसके फलस्वरूप अनेक नर-नारी विकलांग हो गए तथा असंख्य लोग मृत्यु को प्राप्त हो गए। जनहित के लिए जापान ने शत्रुओं के समक्ष हथियार डाल दिए, जिससे आजाद हिन्द फौज के सैनिक व्याकुल हो उठे। सुभाष भी सैनिकों की व्याकुलता को देखकर चिन्तित हो गए। जनहित में उन्होंने भी आत्मसमर्पण का दृढ़-निश्चय कर लिया और सैनिकों को उचित समय पर पुन: लड़ाई प्रारम्भ करने का आश्वासन दिया। इसके पश्चात् सुभाष ने सैनिकों से विदाई लेकर हवाई जहाज द्वारा टोकियो के लिए प्रस्थान किया। यहाँ उन्हें जापान के प्रधानमन्त्री हिरोहितो से मिलना था। दुर्भाग्यवश 18 अगस्त को उनका जहाज ताइहोक में दुर्घटनाग्रस्त हो गया। जापानी रेडियो द्वारा यह दु:खद समाचार प्रसारित किया गया कि नेताजी सुभाषचन्द्र बोस अब नहीं रहे। भारत की जनता को इस आकस्मिक समाचार पर सहसा ही विश्वास नहीं हो सका।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भारत के अगणित स्वतन्त्रता सेनानियों में नेताजी सुभाषचन्द्र बोस जैसे दिव्य व्यक्तित्व के लोग कम ही दृष्टिगत होंते हैं। इसीलिए कवि ने स्वयं उनके विषय में कहा है—

यों तो हुए देश में अगणित स्वतन्त्रता सेनानी।
पर उनमें नेता सुभाष-सी कम की दिव्य कहानी॥

यद्यपि आज नेताजी नहीं हैं, तथापि उनकी अमर वाणी भारत, बर्मा व सिंगापुर की मिट्टी में सदैव गूँजती रहेगी। भारतवासी युगों-युगों तक उनकी अमरगाथा का गान करते रहेंगे।